Vol. 4, No.1 (January 2015) p. 42-44 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

स्वामी हरिदास जी का काव्य सौंदर्य

—प्रो0 (स्व.) सुधीर कुमार वर्मा
पूर्व प्रधानाचार्य
भातखण्डे हिन्दुस्तानी संगीत महाविद्यालय
लखनऊ

स्वामी हरिदास जी ने केवल 18 पद सिद्धान्त के और 110 पद श्रंगार के रचे है। उनके श्रंगार के पदों का संकलन "केलिमाल" कहा जाता है। उनके सिद्धान्त के पदों में कोई दर्शन संबंधी सिद्धान्त नहीं बताये गये है अपितु इन पदों में हरि की सर्वशक्तिमत्ता, जीव की अधीनता, जगत की निस्सारता, भक्तों का सदाचार और हरि भजन का महात्म आदि वर्णित है। इस प्रकार की रचनाओं को रस की रचनाओं से भिन्न बनाने के लिए इस सम्प्रदाय में उन्हें सिद्धाँत की रचना कहा जाता है।

स्वामी हरिदास जी ने अष्टादस पदों के सीधे—सीधे शब्दों में बड़ी ही मार्मिक उक्तियाँ भर दी है, रचना जितनी सरस है उतनी ही प्रभावोत्पादक भी। शब्द थोड़े है किन्तु उनका भाव गम्भीर है। एक उदाहरण देखिए :—

हरि को एसोई सब खेल।
मृगतृष्णा जग व्यापि रह्यौ है कहूं बिजौरी न बेल।।
धनमद जोवनमद राजमद ज्यौ पंक्षिन मय डेल।
कहि श्रीहरिदास यहै जीय जयौ तीरथ को सो मेल।।

अपने अनुवर्ती को आचरण की शिक्षा देते हुए उन्होंने केवल एक पद में अपनी उपासना के मूल तत्व, माधुर्य की भक्ति के साधन और इष्ट के प्रति अनन्यता जैसी गम्भीर वस्तुओं को कितनी सरस और मोहक शैली में बाँध दिया है, निम्न पद में देखिए :—

मन लगाय प्रीती कीजै कर करता सौ ब्रज वीथिन दीजै सोहनी।
वृन्दावन सौं वन उपवन सौं वन मंश्रुमाल हाथ पोहिनी।
गो गोसुतन सौं मृगीमृगसुतन सौ और तन नैक न जोहनी।
श्रीहरिदास के स्वामी श्यामाकुंज बिहारी सौ चित ज्यौं सिर पर दोहिनी।

उपर्युक्त पद एक अदभुद वातावरण की सृष्टि करता है। एक कोरा उपदेश न रहकर, यह उपदेष्टा के मन के सारे मार्दव को, उनकी भाव भरी अनुभूति को, शब्दों के माध्यम से पाठक और श्रोता के मन में उतार कर उसे विभोर कर देता है, उसे रस से सिक्त कर देता है।

सिद्धान्त के पदों को रस के पदों से जोड़ने वाली कड़ी उनका अष्टादशम। यह पद मानों केलिमाल की भूमिका है। निकुंजबिहारी—विहारिणी के रूपरस से भरे अथाह प्रेमसागर की अतलस्पर्शी गहराइयों का जैसा संवेदात्मक रहस्य संकेत यह पद देता है, वह माननीय है।

प्रेमसमुद्र रूपरस गहरे कैसे लागै घात
वैकारौ दै जान कहावत ज्ञानपन्यों की कहा परी वाट।

काहू को शर सुधौ न परै भारत गाल गली गली हाट।
कह श्रीहरिदास जानै ठाकुर विहारी तकत वोट पाट।।

केलिमल के पदों का विषय है प्रियाप्रियतम का निकुंज–विहार। इनमें लाड़िलीलाल का स्वरूप वर्णन, उनका श्रृंगार, उनके नृत्य गीत, उनकी परस्पर प्रीति और सुरति, श्री वृन्दावन का ऋतु–सौन्दर्य और विभिन्न ऋतुओं में युगल केलि, मान और सहचरी द्वारा लाडिली जी को मनाना जैसे श्रृंगार–रस के विषय वर्णित है।

नाभा जी ने अपनी भक्तमाल में स्वामी जी के सम्बन्ध में लिखा है– "अवलोकत रहैं सखीसुख के अधिकारीं।" स्वामी जी के रस पदों से ही ज्ञात होता है, जैसे यह सब आँखों देख वर्णन है। स्वामी जी उसे आँखों से ही नहीं देखते, स्वयं सहचरी रूप से उस केलि में विद्यमान है और विहार में पड़ी उलझनों को सुलझाकर नित्यविहार की निरन्तर्यको बनाये रखते है। रास का एक उदाहरण देखिए,

नाचत मोरनि–संग स्याम मुदित स्यामहिं रिझावत।
तैसीय कोकिला अलापत पपीहा देत सुर तैसेई मेघ गरिज मृदंग बझावत।।
तैसीय स्याम घटा निशि सी कारी तैसीयै दामिनी कैधि दीप दिखावत।
श्री हरिदास के स्वामी स्यामा कुंजविहारी रीझि राधे हँस कंठ लगावत।।

श्याम के मोरौ के संग नाचने का यह सुन्दर शब्द चित्र रचयिता के प्राकृति–पर्यवेक्षण और आस–पास की प्रकृति के साथ तादात्म्य का परिचय देता है। चित्र जितना अलंकारिक है उतना ही मनमोहक। वर्ण्य–विषय के चुनाव तथा वर्णन शैली में अनूठी सूझ स्वामी हरिदास जी की अपनी विशेषता है। प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत दोनों की योजना में उनकी यह विशेषता लक्षित होती है। ऐसा ही एक और उदाहरण देखिए लाल की आँखे लाडिली के मुह पर लगी ही रहती है। एक क्षण के लिए भी हटती नहीं। इसी तथ्य को कैसी चमत्कार पूर्ण अनूठी उक्ति द्वारा कहा गया है।

प्यारी तेरौ बदन अमृत की पंक तामै बींध नैन द्रवै।
चित चल्यौ काढ़न कौं विकच सन्धि संपुट रहौ भ्वै।।
बहुत उपई आहि री प्यारी पैंन करत स्वै।
श्री हरिदास जी के स्वामी स्यामा कुंजबिहारी ऐसे ही रहयो हवै।।

भाषा और भाव की सुकुमारता उनके काव्य का विशिष्ट गुण है। प्रेम व्यापार के झीने मर्म को पहचान कर स्वामी जी ने जो सूक्ष्म दृश्य चित्रित किए है वे आद्वितीय है। उन्होनें काव्य रचना के उद्देश्य से पद नहीं लिखे है। प्रिया–प्रियतम की निकुँज सेल में उनका एक कार्य प्रमुख था संगीत द्वारा उन्हें रिझाना। उसी संगीत की शब्द योजना के लिए उन्होंने जो कुछ लिखा वह हमें उनकी वाणी के रूप में प्राप्त हुआ है। शब्दों की मितव्ययिता स्वामी जी की रचना में विशेष रीति से देखने को मिलती है। वे जितना कहते है उससे अधिक पाठक व श्रोता की कल्पना के लिए छोड़ देते है। प्रत्येक पद में वाच्यार्थ से अधिक व्यंग्यार्थ मिलता है। भावों की भीड़ लगी रहती है, जो शब्दों के सीमित माध्यम के द्वारा मानों व्यक्त होना चाहती है। अतः अनेक स्थलों पर कुछ संकेतों से ही व्यापक वर्ण्य वस्तु का परिचय देकर स्वामी जी आगे बढ गये है। इन संकेतों का समझना उन्हीं के लिए संभव हो सकता है, जो उनकी विचार–रसमणि और उनके वर्ण्य

विषय नित्य विहार की प्रकृति को भलि भाँति जानता है। यही कारण है कि प्रथम बार पढ़ने वाले को उनके पद कुछ अटपटे से लगते है और प्रायः उनका ठीक अर्थ समझने में असमर्थ रहते है।

उनकी भाषा ब्रज भाषा है किन्तु सृंस्कत के तत्सम शब्द भी प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुए है। कहीं कहीं तो सम्पूर्ण पद ही सृंस्कत की रचना से प्रेरित होते है। उनके पदों में ब्रज की आंचलिक बोलियों के शब्द बहुलता से मिलते है। अपने युग के प्रभाव के कारण अरबी फारसी के तत्सम तथा तदभव शब्दों का प्रयोग भी स्वामी जी ने यत्र–तत्र किया है। उदाहरण के लिए बन्दे दर–दर, पिदर, सुमार, निसार, यादे, फर्जी, शाह और सदके आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। अनेक स्थानों पर उनकी भाषा अत्यन्त क्लिष्ट और जटिल भी हो गयी है जिसके कारण अर्थ समझने में कठिनाई होती है। स्वामी जी ने अपने भाव–विभोर पदों में लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ का पूरा–पूरा आश्रय लिया है। वास्तव में उन्हें प्रत्येक पद में इतना कुछ कहने को होता रहता है कि बिना लक्षण और व्यंजना के कहना संभव ही नहीं। स्वामी जी के सम्पूर्ण काव्य में श्रगार रस ही प्रधान रहा है। उनके सिद्धान्त के पदों में शान्त रस के सुन्दर उदाहरण मिलते है। रसों के उपयुक्त वर्ण्य लालित्य स्वामी जी की रचनाओं में सर्वत दृष्टिगोचर होता है। वर्णों की कोमल योजना ने श्रृंगार रस के पदों को कई गुना सरस बना दिया है। उनके पद मृदंग की चाल पर आधारित संगीतात्मक लय में पाठ किए जाने पर ही अच्छी तरह समझे जा सकते है। स्वामी जी ने केवल संयोग श्रृंगार की ही रचनायें की है।

स्वामी हरिदास जी की रचना में सर्वत्र श्रृंगार रस का आलंबन है नित्यविहारिणी श्री राधा तथा आश्रय है कुंजबिहारी। स्वामी जी के निकुंजबिहारी युगल में श्री राधा धीरा और विदग्धा हैं तथा लाल है सुकुमार, आतुर रति लोभी दोनों किशोर वयस्क है और एक दूसरे के प्रेम में छोर तक डूबे हुए है।

स्वामी जी का प्रकृति वर्णन सुन्दर और स्वाभाविक है। प्रकृति के उपादानों को चित्रमय वर्णन में बाँधकर उन्होंने वृदावन के सरस दृश्य उपस्थित कर दिए है। उन्होंने प्रकृति का पदार्थ के समान उपयोग नहीं किया है। वृदावन के पशु पक्षी, भूमि यमुना, त्रिविध वायु सब जीवान्त है और सभी सदा प्रिय प्रियतम के विहार में योग दे रहें है। सभी ऋतुओं में वर्षा के वर्णन विशेष रूप से बहुत मनोहारी हुए है। प्रकृति वर्णन को स्वामी जी ने कहीं भी अधिक अलंकारिक नहीं होने दिया है। उनकी आंखों को वृदावन के जो दृश्य भाये है, उन्हीं दृश्यों को उन्होंने अपने प्रिया–प्रियतम के केलि के उद्दीपन के रूप में ग्रहण किया है।

स्वामी हरिदास जी के काव्य का सौन्दर्य परिभाषाओं में नहीं बाधा जा सकता अपितु उनकी अनुभूति उनके वर्ण्य विषय के साथ तादात्थ स्थापित करके की जा सकती है। उनका काव्य कोरी कला नहीं है, वह उनकी जीवन की साधना का सार है उनकी उपासना का महत्वपूर्ण अंग है उनके मन के सारे प्रेम की अभिव्यक्ति।

नोट– *यह लेख भातखण्डे हिन्दुस्तानी संगीत महाविद्यालय, लखनऊ द्वारा वर्ष 1979 में प्रकाशित ''धृवा पत्रिका'' से लिया गया है।*